कबीर के काव्य में मानव धर्म

नलिनाबहन डाह्याभाई आहीर
शोध छात्रा,
वीर नर्मद दक्षिण गुजरात यूनिवर्सिटी - सूरत

संसार में मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठापना हेतु जिन जिन महापुरूषों ने अपने जीवन काल में मानव हित के लिए संघर्ष करते रहे है, उनकी प्रासंगिकता प्रत्येक युग में ज्यों की त्यों बनी रहती है। और तब तक बनी रहेगी जब तक मनुष्य का अस्तित्व कायम रहेगा। प्रभुईसा मसीह, महात्मा बुद्ध, गुरू नानक, रैदास आदि ऐसे संत महात्मा हुए है, जिनके विचार आज भी उतना ही महत्व रखते है, जितने कि उस युग में रखते थे। अब हमारे समक्ष प्रश्न यह निकलकर आता है कि आखिर संत होता कैसा है, इनको संतो की संज्ञा ही क्यों दी गई है ? “सन्त शब्द की उत्पति संस्कृत की 'अस्' धातु से हुई है, जिसका अर्थ होता है 'होना' और इस धातु के कृदन्त रूप संत के पुल्लिंग एकवचन' सत' के बहुवचन 'संत' से हुई है। जिसका अर्थ 'शत' प्रत्यय के योग से होने वाला या रहने वाला होता है। अर्थात जो अविचिछन्न या एक रूप में विद्यमान रहता है, वही संत है।[१]

सामान्य भाषा में जो सत्य को पूरी तरह से अपनाकर उसी के अनुसार अपने जीवन का निर्माण करता है, वही मनुष्य संत कहलाता है। संत से तात्पर्य यह हुआ, जिसने सत् स्वरूप परमतत्व का अनुभव कर लिया हो। हिन्दी साहित्य में अनेक विधाएँ है, जिनमें से काव्य' प्रमुख विधा रही है। हिन्दी साहित्य में नानक, दादू दयाल, रैदास, मीरा, सुन्दरदास, कबीर आदि के काव्य को संतकाव्य माना जाता रहा है। या फिर ये कहे कि इन संत कवियों द्वारा रचित काव्य के हिन्दी साहित्य में संत काव्य' के नाम से जाना जाता है।

विभिन्न दुःखो से संसार को उभारने के लिए समय-समय पर संत महात्माओं का अविर्भाव होता ही रहता है। ऐसे ही एक संत का नाम है कबीरदास । उदाहरण स्वरूप इस बात को स्पष्ट किया जा सकता है।

'हिन्दू तुरक के बीच में, मेरा नाम कबीर ।
जीव मुकतावन करने, अविगति धरा शरीर ।[२]

कबीर विलक्षण व्यक्तित्व में स्वतन्त्र विचारक, उदार धर्म गुरू, परम संत, महान समाज सुधारक तथा मानवीय समता के विधायक होने के समस्त गुण विद्यमान रहे हैं। कबीर का व्यक्तित्व भले ही अत्यंत क्रांन्तिकारी रहा हो, किंतु वे स्वतंत्रयेता, सत्यवादी, परम सन्तोषी, निर्भीक समाज सुधारक, स्वभाव से मस्तमौला रहे। सुप्रसिद्ध आलोचक हजारीप्रसाद द्विवेदी जी ने कबीर को रहस्यवाद के सीमित घेरे से निकाल कर जाति धर्म निरपेक्ष मानव के रूप में प्रतिष्ठित किया। द्विवेदी के प्रयत्नों एवं नवीन दृष्टिकोण ने कबीर को साधारण व्यक्ति को विलक्षण व्यक्त्वि में उद्घाटित किया है। हजारी प्रसाद जी ने इस अक्खड फक्कड़ व्यक्तित्व

विलक्षणता का समग्रताः निरूपण विवेचन इस प्रकार किया है कि “कबीर ज्ञान के हाथी पर चढ़े हुयें थे पर' सहज का दुलीया' डाले बिना नहीं, भक्ति के मंदिर में प्रविष्ठ हुये थे पर खाला का घर समझकर नहीं, बामाचार का खंडन किया था. पर निरुद्देश्य आक्रमण की मंशा से नहीं, भगवविरह की आँच में तपे थे, पर आँखों में आसू भरकार नहीं, राम को आग्रहपूर्वक पुकारा था, पर बालकोचित मचलन के साथ नहीं सर्वत्र उन्होंने एकसमता की थी। अकारण समाजिक उच्च - नीच मर्यादा के समर्थकों को वे कभी क्षमा नहीं कर सके। भगवान के नाम पर पाखंड रचने वालों को उन्होंने छूट नहीं दी, दूसरों को गुमराह बनाने वालो को उन्होंने कभी तरह देना उचित नहीं समझा। ऐसे अवसरों पर वे उग्र थे, कठोर थे और आक्रामक थे।”[३] यहाँ इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि अन्य आलोचको ने कबीर के श्रेष्ठ व्यक्तित्व पर जो पर्दा डाल रखा थ उसे हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपनी कृति' कबीर के द्वारा उतार फेंका है, और कबीर की छवि को निखारकर हिन्दी साहित्य की नई पीढ़ी यानि आने वाले नये पाठकों को नवीन दृष्टि प्रदान की है। इसी मानवतावादी एवं प्रगतिशील दृष्टिकोण के कारण ही कबीर साहित्य की महानता को लोग समझ सके।

.

वैसे भी मानवतावाद ही एक ऐसा मुख्य साधन है जो एक ऐसे समाज का निर्माण करता है जिसमें समता, सदाचार, तथा नैतिकता की नींव कायम रहती है। कबीरदास समस्त मानव - जाति का उपकार तथा समाज में समता की भावना बनाए रखना चाहते थे, जिसके लिए एक सदाचारी एवं मानव मूल्यों से सुरक्षित समाज का निर्माण होना आवश्यक होता है। संत कबीरदास के साहित्य अध्ययन से स्पष्ट होता है कि उनकी वाणी में मानव जगत (समाज) में व्याप्त विषमता के स्थान समता की स्थापना करना चाहते थे। प्रत्येक मानव को उसका उचित मानवीय समान देने की उत्कर्ष (प्रबल) अभिलाषा कबीर के मन, मस्तिक में समाहित थी।

कबीरदास जनता के कवि रहे है, बल्कि कवि बाद में पहले जनता के दुःख दर्द में भागीदार रहने वाले सच्चे समाजसुधारक भी रहे। समाज के दलित शोषित वर्ग के प्रति उनकी विशेष सहानुभूति रहीं है। संत जन या भक्ति के क्षेत्र में जहाँ सभी मानव प्राणियों के प्रति समानता का भाव रखते है, वही दूसरी ओर समाजिक विषमता के लिए जिम्मेदार लोगों तथा जो लोग समाज को तोड़ने का काम करते है, उनको कबीर खरी खोटी सुनाने में कभी पीछे नहीं रहे। समाज में विषमता दो प्रकार की रही है। १- जातीय, २- आर्थिक दीन दुखियों को गरीबी में भी सम्मान के साथ जीवन जीने के लिए प्रेरित किया।

“निर्धन आदर कोई न देई, लाख जतन करेओहु चित न धरई ।
जौ निर्धन सरधन कै जाई, आगे बैठा पीठ फिराई ।।”

कबीर गरीब व्यक्ति को अमीर से श्रेष्ठ मानते हैं। वे गरीबों को स्वाभिमान से जीवनयापन करने हेतु हमेशा प्रेरित करते रहे। उनका कहना है कि गरीब होना कोई नहीं पाप नहीं है। इसलिए हीन भावना से ग्रस्त होना जरूरी नहीं है। आधुनिक काल में भी गाँधी जी ने कबीर के विचारों का समर्थन करते हुए दरिद्रनारायण की बात कह डाली एवं कबीर की कहि गई बातों को दोबारा से दोहराया। उनकी सोच में गरीब होना कोई अभिशाप नहीं, बल्कि वरदान के समान है, क्योंकि वहीं ईश्वर निवास करता हैं।

कबीर ने हिन्दू और मुसलमान दोनों को ही एक समान मानते है। दोनों धर्मों के बामाचारों का उन्होंने गंभीर अध्ययन किया और बाद उन्हे निरर्थक बताया है। कबीर मतानुसार तो मानव धर्म ही सबसे बड़ा धर्म है। उनके चिंतन के केंद्र में केवल मानव कल्याण ही रहा रहा है। वो धर्म किस काम का जो मानव मानव के बीच भेदभाव का बीज बोता हैं। आखिर प्रत्येक व्यक्ति की आत्मा एवं शारीरिक संरचना में किसी प्रकार का कोई अंतर नहीं है। सभी मनुष्यों का शरीर पंच तत्वों से मिलकर ही बनता है और सभी के भीतर एक ही आत्मा निवास करती है। तो फिर ये भेदभाव जाति-पाति, बाह्मण-शूद्र, ऊँच-नीच किसलिए है। इन्ही बातों को कबीर ने अपने दोहों (साहित्य) के माध्यम से समाज के समक्ष रखा था ।

एक बूंद एक मल मतर एक चाय एक गूदा ।
एक जोति मैं सब उतपनी कौन ब्राहमण कौन सूदा ।।[५]

यदि कबीर से उसकी जाति या पहचान के बारे में कोई सवाल करता था तो उनका उत्तर ऐसे देते है कि आत्मा जाति प्राण उनका नाम है. आराध्य उनका अलख निरंजन है तथा निवास स्थान आकाश है। उन्होंने अपनी एक नई दुनिया बनाई जहाँ पर जन सामान्य की प्रतिष्ठा, सामाजिक समरसता विश्व कल्याण आदि को उद्देश्य बनाकर समाज में व्याप्त विकृतियों का खुलकर विरोध किया। उन्होंने नाथों, सिद्धों की तरह जंगल में पलायन का निषेध करते है। जाति पाति का विरोध करने के साथ साथ कहते है कि भक्ति के क्षेत्र में जाति का कोई स्थान नहीं होता है। इसलिए इन विकृतियों को जड़ से खत्म करने पर बल देते हैं।

“जाति पाति पूछे नहीं कोई,
हरि को भजै सो हरि का होई।।"[६]

सभी को एक समान मानने वाले कबीर के लिए भेदभाव को सहना बहुत कठिन हो रहा था। कबीर ने सामाजिक दृष्टि एवं विकृतियों का अपनी वाणी से स्थान स्थान पर कुव्यवस्था का विरोध करते रहते थे। कबीर के समय में धर्म, समाज एवं संस्कृति तीनों का स्वरूप बिगड़ गया था और सभी रूढ़ियों, अंधविश्वासों व जड़ता में घिरे थे। रोती बिलखती मानवता को उन्होंने केवल सांत्वना ही प्रदान नहीं की, बल्कि जो मार्ग वह भूल चुके थे उसे पुनः दिखाया तथा निश्चित सोई हुई जनता को झकझोर कर मानव धर्म का ज्ञान कराया। समाज के सभी लोग मिलजुलकर रहे. धर्म के नाम कोई किसी का शोषण न करें, हमेशा मानवता को बनाए रखना ही मानव का सच्चा व पहला धर्म होता है। कबीर का भी यही धर्म था और वो मानवता के धर्म को ही सर्वोपरी मानते थे। वो नहीं चाहते थे लोग कहे कुछ और करे कुछ यानि सामने कुछ करें और मन में पाप रखे, ऐसे लोगों को अपने दोहों के माध्यम से सचेत करने का प्रयास करते हैं।

"कबीर काजी स्वादि बसि, वहा हतै तब रोह।
चढ़ि मसीति एकै कहै. हरि क्यों साचा होई।"[७]

कबीर ने उन सभी आचारों विचारों की भी निंदा की है जिनमें मानवीय धर्म का कोई महत्व नहीं तथा मानव धर्म का कोई मूलतत्व मौजूद नहीं और जहाँ केवल प्रदर्शन को ही धर्म मान लेते हैं, उनको अपनी व्यंगात्मक भाषा से खूब फटकार लगाते हैं :-

करता दीसे कीरतन, ऊंचा करि करि तुंड,
जाणें बूझे कुछ नहीं, यो ही आधा सूंड "[८]

साधारण धर्म (सामन्य धर्म) मानव धर्म की विशेषता से पूरित होता है तथा विशेष धर्म का आशय नवश्रिम व्यवस्था के अनुसार आचरण करना होता है। आपद धर्म वह संकटकालीन धर्म है, जिसमें मनुष्य परिस्थितियों के अनुसार अन्याय न्याय के भाव को ध्यान में रखकर स्वविवेक के दवारा निर्णय लेने में पूर्ण स्वतन्त्र होता हैं। कबीर इसी मानव धर्म पर बल देते थे। वो समाज के पुराने स्वरूप को नकारते है और उसे बदलना चाहते है। असमानता का व्यवहार प्रतिरोध की भावना को जन्म देता है. पिछड़ी जातियों एवं निम्न वर्ग में भी प्रतिरोध की भावना का कारण भी यह सामजिक असमानता ही रहा है। समाज चार वर्णों में विभाजित था। प्रत्येक वर्ण के लिए कुछ नियम, कर्तव्यों को भी निधारित किया गया था। उन नियमों का पालन करना ही लोग अपना धर्म समझने लगे वो केवल निरर्थक था। ब्राह्मणों को बससे ऊँचा और निम्न वर्ग के साथ पशुओं की भाँति व्यवहार किया जाने लगा था। इस अनर्थ को देखकर कबीर द्रवित हो उठते है और छुआ छूत एवं वर्ग व्यवस्था दोनों के प्रति आक्रोश प्रदर्शित करते है।

कहे को कीजै। पांडे छोति विचारा,
छोतिही ते अपना सब संसार
हमारे कैसे लोहू। तुम्हारे कैसे दूध,
तुम्ह कैसे ब्राहमण पांडे। हम कैसे सूद।।"[९]

कबीर के अतर भाषणवादी या समाजसुधारक की प्रवृत्ति फक्कड़ कबीर में नहीं थी, किंतु वे समाज की गंदगियों को साफ करना चाहते थे। वो साफ सुथरा समाज चाहते थे। बस यही प्रवृत्ति उनको समाज सुधारकों की श्रेणी में लाकर खड़ा करती है। कहने का भाव यह है कि समाज में समता अनुयायी एवं समाज सुधारक बनने की आकांक्षा के बिना ही अपने निर्गुण राम के दीवाने कबीर को स्वतः ही सुधार की गारिमामय उपधि मिल कई जनता का दुःख उनकी वेदना से फुट फुट कर ही उनके काव्य की अजस्त्र धारा बन कर बही। मिथ्याडम्बरों के प्रति प्रतिक्रिया करना कबीर का जन्म जात गुण था। वे प्रत्येक तथ्य को आत्मा व विवेक की कसौटी पर रखते थे।

कबीर की पावन वाणी आज के समाज और उसकी विषमताओं के परिप्रेक्ष्य में उतनी ही खरी तेजोमय तथा उपयोगी सिद्ध होती है, जितनी कि तब भी। समाज की अप्रिय रीति को देखकर उस पर उन्होंने इतने तीखे प्रहार किये कि ढोंगी बाबाओं, ब्राह्मणों, मौलवियों के दिखावों की धज्जियाँ उड़ गयी। उनकी वाणी में तीखा एवं अनौखा व्यंग्य देखने को मिलता है, जो कि बौद्धिकता की कसौटी पर खरा उतरता हो। आधुनिक युग में भी हिन्दी जगत में उनके तीखे व्यंग्यों की तुलना में हिन्दी साहित्य में आज तक कोई ऐसा कवि नहीं हुआ है कबीर तर्क का सहारा लेने वाले तर्कवादियों को मूर्ख एवं मोटी बुद्धि वाला मानते है। उनका मानना है कि जीवन की प्रत्येक बात तथा जीवन का हर पहलू तर्क से सिद्ध नहीं होता कुछ बाते अनुभव पर आधिरित होती है।

जन-भाषा के कवि कबीर माने जाते हैं. उनकी वाणी लोककंठ में न जाने कब से इस तरह बैठ गई है कि उसे सीखने के लिए न तो कोई पोथी पढ़नी पड़ती है, न ही गुरू बनाने की आवश्यकता पड़ती है। यह भाषा रूपी जादू कबीर ने योगियों, साधकों, नाथों, सिद्धो तथा महान विद्वानों से पाया है। कबीर ने मानव के लिए सर्वाधिक मूल्यवान जीवन मूल्यों को माना है, जो केवल शिक्षा से नहीं आते. अनुभव से आते है। वे कहते हैं कि अनुभव ही सच्ची शिक्षा है. वही सच्चा शिक्षक है। कबीर काव्य के भाव जितने प्रभावशाली है. भाषा उतनी ही

विलक्षण भी है। उन्होंने किसी विशेष व्यक्ति, जाति वर्ग के लिए नहीं लिखा, बल्कि सम्पूर्ण मानव जाति हेतु अपनी लेखनी चलाई है। हजारी प्रसाद द्विवेदी उनकी काव्य भाषा के बारे यह टिप्पणी करते हैं, कि भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होंने जिस रूप में प्रकट करना चाहा हैं उसे उसी रूप में भाषा से कहलवा लिया है -

बन गया है तो सीधे सीधे, नहीं तो दरेरा देकर ।
भाषा कुछ कबीर के सामने लाचार सी नजर आती है।[१०]

अतः कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्य की धड़कन, बहुमुखी प्रतिभा के धनी संत कबीर मानवीय समता के विधायक होने की विचार धारा एवं दृष्टिकोण रखते थे। वास्तव में ही कबीर ने मध्यकाल में अपने अमृत वचनों से भटकती जनता का उपचार किया था। इतना ही नहीं कबीर वाणी आज के कलयुग में भी उतना ही सामाजिक एवं महत्व रखती है, जितनी कि मध्यकाल में रखती थी। आज भी भौतिकवाद के अंधकार तथा विभिन्न जातियों, धर्मों वर्गों आदि भेदभाव से पूर्ण रूप से हम कहां मुक्त हो पाएँ है, इसलिए कबीर वाणी एवं अमृत वचन आज भी मानव के लिए प्रकाश का मार्ग आलोकित करते हैं। साम्प्रदायिकता, गैर बराबरी, हिंसा हत्सा से अस्त भारतीय समाज की वर्तमान व्याधियों, विकृतियों को अपने ही समय में लक्षित कर इनके अपचार सुझाने वाली कबीर की वाणी वर्तमान में भी सुनिश्चित अचूक औषधि के समान काम करती है।

संदर्भ सूची

१. पटियाल, रवि कुमार पटियाल (२००५). ' हिन्दी के संत काव्य में योगतत्व', प्रथम संस्करण, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली. पृ. २१
२. खान, एम. फिरोज 'नई सदी में कबीर प्रकाशक आकाश पविलशर्स एण्ड डिस्टीब्यूटर्स ई-१०१६६३ उतरांयल कॉलोनी, लोनी बार्डर गाजियाबाद
३. द्विवेदी, हजारी प्रसाद (१९४२). 'कबीर' प्रथम संस्करण, प्रकाश हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई (हीरानाग) पृ. १७६
४. खान, एम. फिरोज 'नई सदी में बीर' प्रथम संस्करण २००९ प्रकाशक : आकाश पब्लिशर्स एण्ड डिस्टीब्यूटर्स, उतराचल कालोनी, पृ.८८
५. वही. पृ. ८७
६. वही पृ. ७१
७. कौशिक, मीर्ता 'सामाजिक बुराईयों के अभूलन में कबीर का योगदानः आज के संदर्भ में-पृ. ४१
८. वही पृ. १५०
९. खतून. आयशा 'कबीर काव्य में मानवीय चेतना' प्रकाश क अक्षर शिल्पी वैस्ट गोरख पार्क दिल्ली पृ.८५
१०. द्विवेदी, हजारी प्रसाद 'कबीर' प्रथम संस्करण (१९४२) प्रकाशक हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, दीराबाग बम्बई- पृ. २१६